इकाई 7 आंतरिक व्यापार*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 आंतरिक व्यापार के अध्ययन हेतु स्रोत

7.3 मुगल शासकों के अंर्तगत आंतरिक व्यापार

7.3.1 आंतरिक कारवाँ मार्ग

7.3.2 अंतरस्थलीय कारवाँ मार्ग

7.3.3 व्यापारी, व्यापार हेतु वस्तुएँ और उनका बाजार

7.3.4 व्यापार, वाणिज्य और राज्य

7.4 अवध का केस–अध्ययन

7.5 सारांश

7.6 शब्दावली

7.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.8 संदर्भ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप मुगल साम्राज्य में आंतरिक वाणिज्य की प्रकृति के विषय में अध्ययन करेंगे। इस व्यापारिक प्रक्रिया में बहुत सी आपस में गुथी हुई गतिविधियाँ थी।

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप यह समझ सकेंगे कि–

- मुगलों के अधीन आंतरिक व्यापार का स्वरूप कैसा था?
- इन व्यवसायिक क्रियाकलापों में सम्मिलित प्रमुख व्यापारिक समूह कौन से थे?
- मुख्य शहरों में और बाजारों में चल रही गतिविधियाँ क्या थी?
- राज्य के साथ व्यवसाय और व्यापार के संबंध किस प्रकार के थे?
- प्रमुख आयातित और निर्यात की वस्तुओं की सूची क्या थी?
- व्यापारिक वर्ग पर लागू किये गये प्रमुख विभिन्न कर कौन से थे; और
- व्यापार की इस संरचना में प्रमुख महत्व के अंतरस्थलीय मार्ग कौन से थे?

*डॉ. दिव्या सेठी, म्युज़ियम–सेक्टर स्किलड प्रोफेशनल, संस्कृति मन्त्रालय, नई दिल्ली।

7.1 प्रस्तावना

किसी भी औपनिवेशिक इलाके के, उपनिवेश से पहले के आर्थिक विकास को समझने के लिये, हम आज के मानकों का प्रयोग नहीं कर सकते। जनसंख्या–वृद्धि की दर, कृषि के विस्तार और प्रति–व्यक्ति राजस्व की प्राप्ति को इन समाजों में आर्थिक वृद्धि दर को मापने का एक अच्छा तरीका समझा जाता है (मूसवी, 1993: 406)। सत्रहवीं सदी में मुगल आर्थिक स्थिति में आये बदलावों में से एक था व्यापार के माध्यम से चाँदी का मुगल शासकों द्वारा प्राप्त किया जाना।

मुगलों की अर्थव्यवस्था, आधुनिक अर्थव्यवस्था से पूर्व की किसी भी व्यवस्था की तरह, अधिकांशतः कृषि कार्यकलापों पर ही आधारित थी। राज्य की राजस्व प्राप्ति में और रोजगार की उपलब्धता की दृष्टि से तुलनात्मक रूप से व्यावसायिक समाज आकार में छोटा था। हालांकि व्यावसायिक क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रभावों को ध्यान में रखने पर, यह दिखता है कि इसका दूरगामी असर पड़ा। भू–राजस्व के रूप में जो फसल के रूप में कृषि उत्पादन को संग्रहित किया जाता था, राज्य के द्वारा उसे अंततः मुद्रा में तब्दील कर लिया जाता था। इस अंतरण के लिये बड़े पैमाने पर व्यावसायिक क्रियायें और आदान–प्रदान की आवश्यकता होती थी। इस प्रकार, समाज के विभिन्न समुदायों के जीवन में व्यापार एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में स्थापित था।

स्थानीय स्तर पर और क्षेत्रीय स्तर पर व्यावसायिक गतिविधि मुख्यतः जनसमूहों द्वारा उपयोग की जाने वाली वस्तुओं से ही जुड़ी होती थी। खाद्यान्न का व्यापार बड़े पैमाने पर होता था और इसका कुल व्यापार में एक बड़ा हिस्सा था। कुछ क्षेत्र खाद्यान्न उत्पादन में प्रमुख थे, जबकि अन्य क्षेत्रों को नियमित रूप से खाद्यान्न आयात करना होता था। बन्जारे लोग लम्बी दूरी तक कारवाँ बनाकर अनाज को एक जगह से दूसरी जगह ले जाया करते थे। अनाज के व्यापार का एक बहुत बड़ा हिस्सा जल–मार्गों के द्वारा, या तो नदी के रास्ते या समुद्री तटों के रास्ते किया जाता था। विवरण के लिये **इकाई 8** देखें, जो इस कोर्स में दी गयी है। इस इकाई में हमारा ध्यान मुगल साम्राज्य में आंतरिक व्यापार को समझने में रहेगा।

7.2 आंतरिक व्यापार के अध्ययन हेतु स्रोत

मुगलों के अंतर्गत आंतरिक व्यापार के अध्ययन हेतु मौलिक स्रोत बहुत से दस्तावेज हैं, जो फारसी और स्थानीय भाषाओं में है। इनमें ऐतिहासिक और जन्म–गाथाओं के दस्तावेज, अनेकों प्रशासनिक विभागों के सरकारी अभिलेखीय दस्तावेज और विभिन्न क्षेत्रों के साहित्य सम्मिलित हैं। विशेष तौर पर मूल्यवान हैं – अबुल फजल का *आईन–ए–अकबरी*, मिर्जा नाथान का *बहारिस्तान–ए–घायबी*, कैफी खान का *मुन्तखबू–एल–लुबाब*, अली मुहम्मद खान का *मिरात–ए–अहमदी*, अभिलेखागार में रखे गये विभिन्न क्षेत्रों के दस्तावेज, जैसे कि मराठा राज्य और राजपूताना, और दक्षिण भारत से जुड़े अभिलेख (तमिल तेलगू और अन्य भाषाओं में लिखे गये)। ये सभी अभिलेख व्यापार के, करारोपण के और आपसी संघर्ष की बहुत महत्वपूर्ण सूचनाओं से भरे हैं। राजस्व अभिलेख *(दस्तूर अमल)* इतिहासकारों द्वारा, मुगल शासन के अंर्तगत आर्थिक क्रियाओं पर प्रकाश डालने वाले स्रोतों के रूप में उपयोग किये गये। इन दस्तावेजों (अभिलेखों) को शाहजहाँ के कार्यकाल में संगठित किया गया। मुगल

साम्राज्य के अंर्तगत व्यापार के अध्ययन के लिये, औरंगजेब और अन्य मुगल बादशाहों द्वारा अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को दिये गये आदेश आदि।

विदेशी यात्रियों द्वारा तैयार किये गये अपने भ्रमण संबंधी लेखों को महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में लिया गया जिनमें अरब भ्रमणकारी इब्न–बतूना, पुर्तगाल के डी. बरबोसा, अंग्रेज टी. मारशल, डच यात्री एफ. पेलसर्ट, फ्रांसीसी एफ. बर्नीअर, और जे. बी. द्रेवरनियर और अन्य शामिल हैं। इन सभी स्रोतों से वस्तुओं का लाना–ले जाना, व्यवसायियों का इनमें शामिल होना, और उनके राज्यों के साथ संबंधों के बारे मे पता चलता है और यह भी कि किस प्रकार, भारत की मध्यकालीन अर्थव्यवस्था तथा राजनीति पर इस व्यापार ने प्रभाव डाला।

मध्यकालीन भारत की अर्थव्यवस्था के संबंध अध्ययन का अन्य स्रोत आंग्ल भाषा में उपलब्ध सूचनाओं का संग्रह है। अपनी सीमाओं के भीतर रहते हुए, ये स्रोत बताते हैं कि भारत और पड़ोसी इलाकों के बीच में स्थलीय मार्गों से होने वाला व्यापार कितना महत्वपूर्ण था। कभी–कभी तो, ये स्रोत देश के विभिन्न क्षेत्रों के बीच होने वाले अंतर्राज्यीय व्यापार को प्रभावित करने वाले कारकों को भी प्रतिबिबिंत कर देते थे। सोलहवीं और आरंभिक सत्रहवीं शताब्दी के संबंध में भारत के विदेशी व्यापार से संबंधित व्यापार के मूल्य और मात्रा की सूचना देने के संबंध में स्रोत असमर्थ हैं। तब, इस व्यापार का वस्तु–संयोजन न केवल यह स्पष्ट करता है कि इस व्यापार की प्रकृति कैसी थी, बल्कि इसके अन्य पहलुओं पर भी अच्छा प्रकाश डालता है।

इस संबंध में 1634 की एक डच रिपोर्ट का उल्लेख हो सकता है, जो बताती है कि भारत से परशिया को भेजी गयी एक खेप की कुल कीमत क्या होती थी और उससे कमाया गया लाभ कितना होता था। यद्यपि इस प्रकार की रिपोर्ट प्रत्येक वर्ष के लिये उसी निश्चित समय की प्राप्त नहीं होती हैं। इससे हमारे ज्ञान में पूरी बढ़ोतरी नहीं हो पाती थी। इसलिये, विस्तृत क्षेत्रीय अध्ययन और स्थानीय स्रोतों से मिली जानकारी के उपयोग से ही एक सुस्पष्ट समझ विकसित होती है। ऐसे अध्ययन व्यवसायीकरण की क्षेत्रीय प्रवृत्तियों को स्पष्ट करते हैं और मध्यकालीन भारत में आर्थिक वृद्धि के सामान्य स्वरूप को समझने में हमें मदद करते है।

इन स्रोतों को 19वीं एवं 20वीं शताब्दी के विद्वानों द्वारा बड़ी संख्या में प्रकाशित कराये गये ऐतिहासिक भौगोलिक आँकड़ों के संकलन से मदद मिली है। हालिया क्षेत्रीय अध्ययन इस क्षेत्र में रूचि बढ़ाने में प्रोत्साहित करते हैं, जो भारत की अतीत में हुई आर्थिक प्रगति के स्पष्ट चित्र को सामने रखते हैं। विश्व इतिहास लेखन पर विस्तृत प्रकाशनों ने भारत पर औपनिवेशवाद द्वारा विजय प्राप्त करने से पूर्व भारत की सामाजिक–आर्थिक विकास का सही संज्ञान लेने में और मदद की।

7.3 मुगल शासकों के आधीन आंतरिक व्यापार

मुगल शासन के अंतर्गत आंतरिक व्यापार की शुरुआत ग्राम्य–स्तर से हुई, जहाँ पर कृषि उत्पाद के अधिशेष को राजस्व की प्राप्ति हेतु धनराशि के बदले बेचने का चलन शुरू हुआ। अनाज खरीद के पारम्परिक व्यवसायी, इस अधिशेष का बड़ा हिस्सा खरीद लेते थे, और उसको अन्य शहरों और बाजारों में बेच देते थे। बाजार बड़े–बड़े गांवों में या छोटे शहरों/कस्बों में लगते थे, या तो रोजमर्रा की जरूरत की चीजों की पूर्ति बनाये रखने के लिये, या समय–समय पर विशेष वस्तुओं की पूर्ति के लिये। ये छोटी–छोटी बाजारें स्थानीय

होते हुए भी क्षेत्र की बड़ी बाजारों से जुड़ी रहती थी। ये केन्द्र अंतर्क्षेत्रीय मण्डी के रूप में विदेशी व्यापार के लिये भी प्रयोग में आते थे। उनके पास टकसाल भी थी जहाँ स्वर्ण, चाँदी और ताँबे के सिक्के ढलते थे।

इस प्रकार, आंतरिक व्यापार मुगल शासन में तीन स्तरों पर होता था–

1) स्थानीय और क्षेत्रीय व्यापार

2) अंतक्षेत्रीय व्यापार

3) अंतरस्थलीय/विदेशी व्यापार

7.3.1 आंतरिक कारवाँ मार्ग

आंतरिक व्यापार मार्ग

मुगल शासन में, भारत में विभिन्न क्षेत्रों के मध्य व्यापार, बहुत विकसित था, और समय साध्य और लाने–ले जाने पर आने वाली कीमत के अधिकतम होते हुए भी उच्चस्थ दर्जे का था। विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ क्षेत्रों में व्यापार हेतु लाई जाती थी। पूर्व में, बंगाल व्यवसाय और विपणन का प्रमुख केंद्र था। इसके देश के विभिन्न अधिकांश भागों के साथ अत्यधिक विकसित व्यापारिक संबंध थे। ढाका, हिजली, हुगली, मालदा, मुर्शिदाबाद, सटगाँव, सोनारगाँव और श्रीपुर मुख्य व्यापारिक केन्द्र थे। बिहार, उड़ीसा, गुजरात, और कश्मीर से बंगाल तक से विभिन्न उत्पादों को लाया जाता था। आगरा, बनारस और उत्तरी भारत के अन्य शहरों से भी बंगाल के व्यावसायिक संबंध थे।

पश्चिमी क्षेत्र में, अहमदाबाद और सूरत सबसे बड़े व्यवसायिक केन्द्र थे। गुजरात को मसालों की पूर्ति मालाबार तट से हुआ करती थी। गुजरात से बड़े पैमाने पर व्यापार कोंकण और मालाबार शहरों तक किया जाता था। उत्तरी क्षेत्र में, भारत में मुगल शासन के अंतर्गत, पंजाब से होते हुए विशद स्थलीय मार्गों से अंतरस्थलीय व्यापार होता था। आगरा को बड़ी मात्रा में बंगाल से रेशम प्राप्त होता था, राजस्थान से प्रसिद्ध संगमरमर और देश के अन्य भागों से वस्तुएँ प्राप्त होती थीं। दक्षिण भारत से अधिकतर व्यापार तटीय मार्गों से होता था। गोलकुण्डा की खदानों से हीरे, भारत के सभी हिस्सों में व्यापार के लिये भेजे जाते थे। अच्छी किस्म का लोहा ढाका और दक्षिण भारत में बनाया जाता था। खनिज और धातुओं का उत्पादन देश के जिस भी क्षेत्र में होता था, उसे अन्य क्षेत्रों में व्यापार हेतु ले जाया जाता था। मुगल साम्राज्य में व्यापारिक मार्गों का एक विस्तृत संजाल था जो व्यवसाय के प्रमुख बड़े केन्द्रों से जुड़ा हुआ था। सभी व्यावसायिक भागों में प्रमुख मार्गों पर थोड़ी–थोड़ी दूरी पर सराय हुआ करती थीं, जिन मार्गों पर आवागमन अधिक होता था, उनमें मीनारें हुआ करती थीं, 'कोसमीनार' जो तय की गई दूरी की सूचना देती थीं। महत्व के कुछ व्यापारिक मार्गों की सूची नीचे दी जा रही है:

- **आगरा से दिल्ली** का मार्ग जो **काबुल** से जुड़ा था: यह मार्ग सोनीपत, पानीपत, करनाल, अम्बाला, लुधियाना, फतेहपुर, लाहौर, रावलपिंडी, पेशावर और काबुल से होता हुआ गुजरता था।

- **आगरा से बुरहानपुर** का मार्ग जो **सूरत** से जुडा था: यह मार्ग धौलपुर, ग्वालियर, नरवर, बुरहानपुर, नंदूरवार (नंदरबार), किरका और सूरत से होकर गुजरता था।

- **सूरत से अहमदाबाद** जो **आगरा** को जोड़ता थाः यह मार्ग भरुच, बड़ौदा, अहमदाबाद, पालनपुर, जालौर, मेड़ता, हिन्डन, फतेहपुर सीकरी और आगरा होकर गुजरता था।

- **आगरा से पटना** जो **बंगाल** से जुड़ा थाः यह मार्ग फिरोजाबाद, इटावा, सराय शाहजादा, इलाहाबाद, बनारस, दाउद नगर, पटना, मुंगेर, भागलपुर राजमहल और ढाका से होकर गुजरता था।

वाणिज्य और व्यावसायिक मार्गों पर परिवहन के साधन, बोझ उठाने वाले पशुओं और नदी जल मार्गों में चलने वाली नावों से बने थे। बैलों से जुड़ी गाड़ियाँ और ऊंट स्थल मार्गों पर वस्तुओं को ले जाये जाने के लिये उपयोग किये जाते थे। मानव–श्रम भी अक्सर उपयोग में लाया जाता था। नदी मार्गों पर, विभिन्न प्रकार की नावों का प्रयोग महाद्वीप में विभिन्न क्षेत्रों को जोड़ने में किया जाता था। पानी के बहाव की दिशा में परिवहन आसान होने से वस्तुओं को लाने ले जाने में समय कम लगता था। इस प्रकार से किया जाने वाला यातायात कम खर्चीला भी होता था।

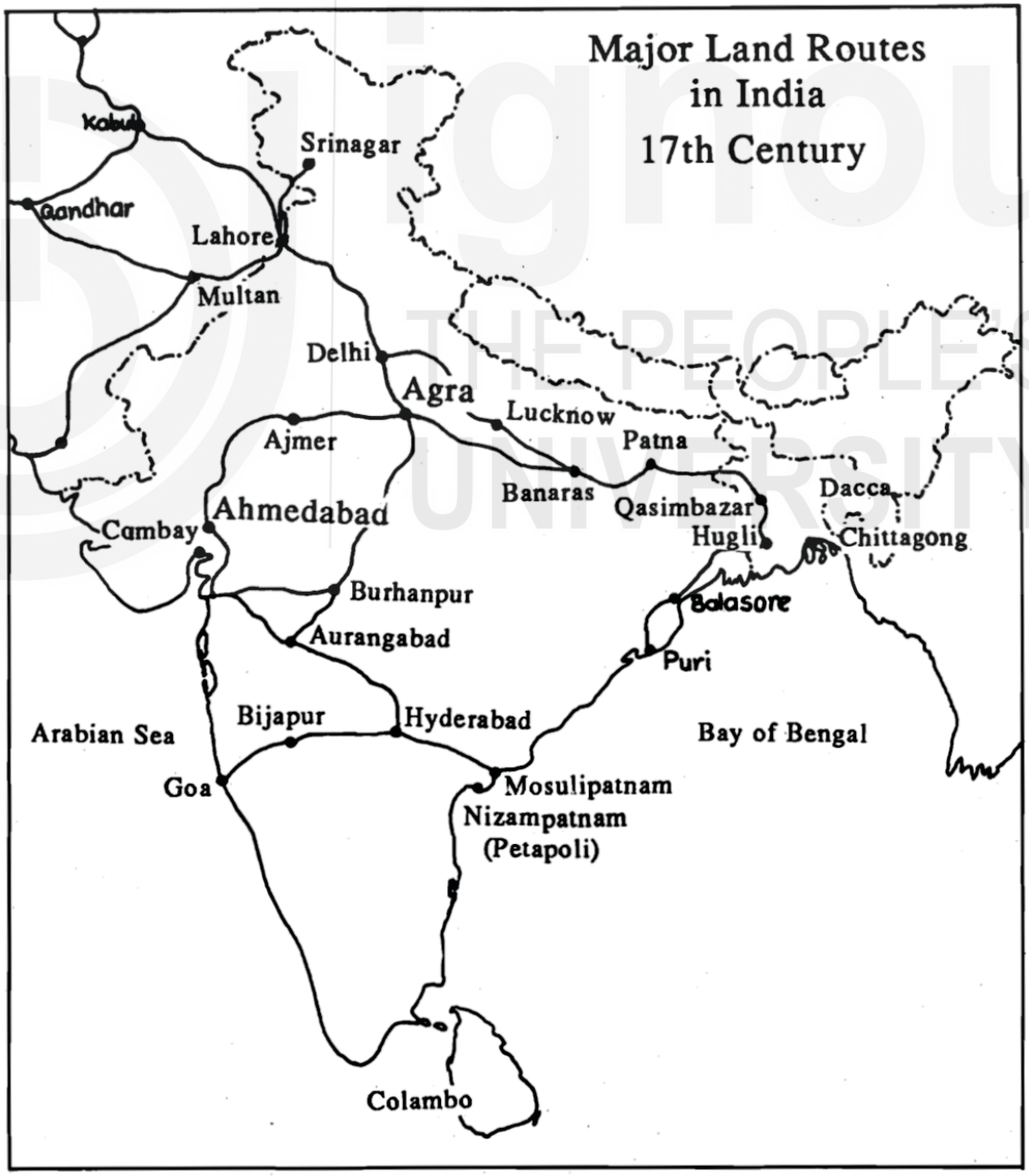

नक्शा 7.1: सत्रहवीं शताब्दी भारत मे विभिन्न स्थल मार्ग 1 स्रोतः ई एच आई, ब्लाक 6, इकाई 23, pp. 31

7.3.2 अंतरस्थलीय कारवाँ मार्ग

अतीत काल से भारत पड़ौसी क्षेत्रों से व्यापार करता रहा था। भारत का विदेशी व्यापार सत्रहवीं शताब्दी के दूसरे अर्धभाग तक, जब देश में यूरोपीय देशों की उपस्थिति परिमाण में महत्वपूर्ण हो गई थी, फारस की खाड़ी और लाल महासागर में स्थित देशों के जरिये हो रहा था। इस तरह के व्यापार में, जो समय दूरियां तय करने में लगता था, स्पष्टतः व्यापारियों द्वारा किये गये निवेश पर लाभ लम्बा समय व्यतीत हो जाने के बाद ही मिलता था। इसलिये, व्यापार ज्यादा मात्रा में किया जाना आवश्यक होता था ताकि निवेश किये गये धन पर अच्छा लाभ प्राप्त हो सके। इसके अतिरिक्त, भिन्न–भिन्न क्षेत्रों की इस स्थलीय व्यापार पर अलग–अलग स्तर पर पहुँच थी। पूर्वी सीमा पर आने वाले क्षेत्रों की तुलना में महाद्वीप के उत्तर–पश्चिम सीमा पर पड़ने वाले क्षेत्रों की इस व्यापार में भागेदारी अधिक रहती थी। तटीय क्षेत्रों की इन देशों तक पहुंच समुद्र के रास्ते थी। (भारतीय सामुदिक व्यापार संजाल के बारे में आप अगली इकाई 8 में पढ़ेंगे)।

बहुमूल्य धातुओं की कुल कीमत के आधार पर, फारस की खाड़ी के साथ हो रहे व्यापार की तुलना में लाल महासागर के साथ हो रहे व्यापार ने बढ़त ली थी। मोका में दो मुख्य बाजार थे, पहले बाजार में यमन क्षेत्र का लाल महासागर का अफ्रीकी तट और हाद्रामौत तट का सामान बिकता था। दूसरी हज तीर्थयात्रियों की जरूरतों को पूरा करने वाला बाज़ार था। स्थानीय बाजार में तुर्की व्यापारियों का बाहुल्य था। गुजरात के बनिया लोग भी इस व्यापार में सक्रिय रूप से व्यस्त थे। इनके आढ़तिये अंतरस्थलीय केंद्रों में रखे जाते थे – जैसे सना, बेत–एल–फकीह और टैस, जहां पर स्थलीय व्यापार मार्गों द्वारा बड़ी मात्रा में कपड़ा लाया जाता था। इस प्रकार, अंतरस्थलीय केन्द्र समुद्रीय मार्गों और उन विकल्पों की ओर केन्द्रित थे, जहाँ पर उनको कम मात्रा में कर देना होता था।

अंतरस्थलीय मार्ग सुरक्षा और संरक्षण की दृष्टि से व्यापारियों के लिये अधिक रुचिकर थे। ये मार्ग प्रत्यक्ष रूप से शासक के नियंत्रण में हुआ करते थे, समुद्री मार्गों की अपेक्षा जो कि यूरोपीय कम्पनी की दया पर निर्भर थे। स्थलीय मार्ग, अगर तुलना करें तो राह में आने वाली मुसीबतों से सुरक्षित थे, ठहरने आदि का प्रबन्ध ठीक–ठीक होता था, और अतिरिक्त व्यय भी तुलनात्मक दृष्टि से कम रहता था।

पूरी सत्रहवीं शताब्दी में भारत और ईरान के बीच व्यापारिक संबंध सक्रिय रूप से बने रहे। जैसा कि ट्रेवरनियर ने ठीक ही कहा कि स्थलीय मार्गों के द्वारा व्यापार करने के लिये व्यवसायी ज्यादा तैयार रहते थे, और हमेशा उसी को पसंद करते थे।

यद्यपि कि गोमब्रून[2] पर जहाज लेना बहुत आसान होता है, फिर भी अनेक व्यवसाय ऐसे होते है जो स्थलीय मार्ग का चयन करते हैं, और इसी के रास्ते भारत में बना सुन्दरतम कपड़ा आया करता है।

यूरोपीय कम्पनियों से बढ़ रहे झगड़े और उनके द्वारा एशिया के व्यापारियों का हिस्सा कम करने के लिये किये जा रहे उपायों की वजह से व्यापारी 1630 तक स्थलमार्ग को प्राथमिकता देते थे।

[2] गोमब्रून परशियन खाड़ी का बड़े बन्दरगाहों में से एक है, जहाँ भारत के जहाज आकर व्यापार करते थे। बसरा एक अन्य बन्दरगाह है जहाँ बड़ी मात्रा में व्यापार संचालित होता था।

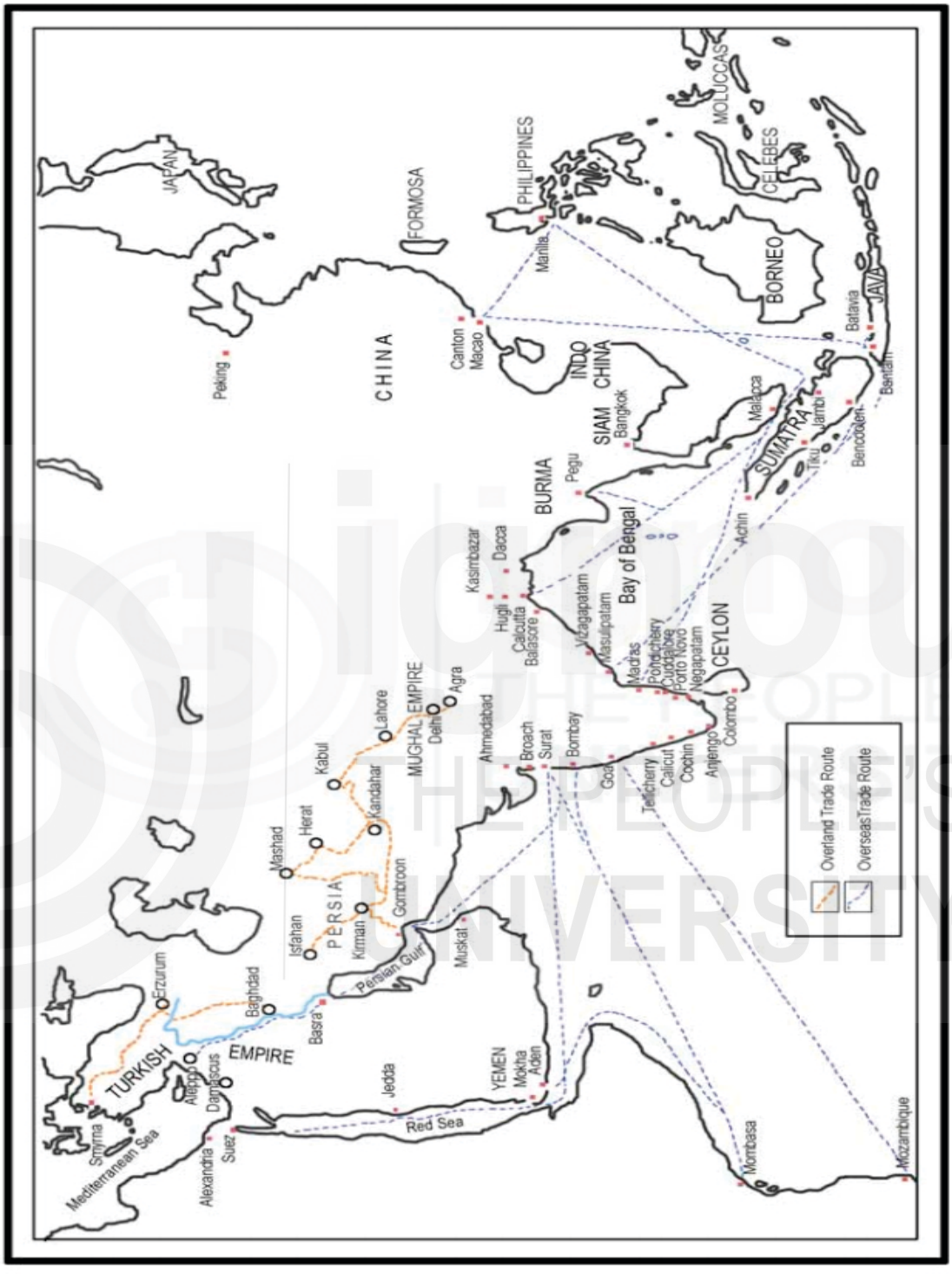

नक्शा 7.2 अंतरदेशीय और समुद्री व्यापार मार्ग 17वीं एवं 18वीं शताब्दी

मध्य एशिया का मुख्य भू–भाग खैबर और बोलन दर्रों से होकर खुलता था। इन रास्तों पर लाहौर, मुल्तान, काबुल और कन्धार मुख्य प्रवेश द्वार थे। इन मुख्य व्यापारिक मार्गों पर बहुत सी छोटी धमनियों जैसे रास्तों की मिलने की जगह हुआ करती थीं, जो मुख्य मार्ग को अपने

विशेष गुण के कारण सहायता प्रदान करती थीं। लद्दाख से मार्ग तिब्बत, चीन और भारत से निकले मार्ग कासगर से जुड़ते थे जो काश्मीर से निकले मार्गों से होते हुए कराकोरम और यारकन्द तक पहुँचते थे। काशगर से कारवाँ[3] समरकन्द और बुखारा को निकलते थे।

व्यापार के लिये सबसे महत्वपूर्ण मार्ग आगरा से लाहौर का था, जिसमें बीच–बीच में रूकने के स्थान दिल्ली, सिरहिन्द, पानीपत, और समाना थे। एक अन्य मार्ग जो अत्यंत महत्वपूर्ण था, वह कश्मीर को लाहौर से मिलाता था। व्यापारियों के दल जो नियमित रूप से लाहौर में एकत्रित होते थे, जहां वे कन्धार जाने के लिये, और काबुल भी बहुत अच्छी तरह से जुड़ा हुआ था जहाँ से मध्य एशिया के बाजारों की वस्तुएं आती थीं।

कन्धार परशिया से भारत के मुख्य मार्ग पर सामरिक इलाके में स्थित है। यह परशिया, भारत और मध्य एशिया से आने वाले व्यापारियों के लिये मिलन–बिन्दु भी था। सत्रहवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में मुगलों और सफाविदों के बीच कई लड़ाईयां इस मार्ग पर अधिपत्य जमाने के लिये हुई। थेवोनोट के अनुसार इस व्यापार मार्ग से मुगलों को 16–17 करोड़ रूपये प्रति वर्ष की आय होती थी।

कन्धार से एक ओर पंजाब और सिन्ध काफी करीब पड़ते हैं, तो दूसरी ओर दिल्ली और आगरा। सिन्ध नदी में रेत के घसकने से जहाँ दिल्ली और आगरा के लिये सामग्री का परिवहन महंगा पड़ता था, वहीं पंजाब और सिंध के लिये सामान ले जाना ज्यादा आसान होता था।

मध्यकाल में व्यापार के लिये सर्वाधिक प्रयोग किये जाने वाला स्थलीय मार्ग, महान सिल्क मार्ग था, जो चाइना से आरंभ होकर मध्य एशिया होते हुए, काशगर, समरकन्द और बाल्ख और काबुल तक जाता था। यह मार्ग लाहौर में भारतीय अन्दरूनी इलाकों से जुड़ा था। फरात के पार यह एलप्पो तक जाता था, जहाँ से वस्तुओं को जहाजों द्वारा यूरोप ले जाया जाता था।

7.3.3 व्यापारी, व्यापार हेतु वस्तुएँ और उनका बाज़ार

भारतीय व्यापारी तत्कालीन एशिया के व्यापार में एक केन्द्रीय भूमिका में थे। यद्यपि इस व्यापार का अधिकांश परिमाण समुद्री परिवहन के रास्ते ले जाया जाता था, फिर भी बहुत सा सामान अंतरस्थलीय मार्ग से भी जाता था। नियमित व्यवसायी सामान को लाहौर, काबुल, मुल्तान और कान्धार जैसे मुख्य केन्द्रों व्यापार संचालित होता था। परशिया से और अन्य मध्य–पूर्व देशों से, वस्तुओं को नियमित रूप से आदान–प्रदान किया जाता था। आप इन लोगों द्वारा अपनाई गई विभिन्न व्यवसायिक रीतियों और बहुत से व्यवसायिक समाजों के बारे में इकाई 9 में अध्ययन करेंगे।

मुगल साम्राज्य के उत्तर पश्चिमी इलाकों के व्यापारी सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में इस व्यापार में हावी रहे। भारत में मुगलों की ताकत बढ़ते समय खत्री समाज के लोग इस व्यापार में अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज करा रहे थे।[4] जैसाकि पहले बताया गया, यूरोपीय शक्तियों

[3] मुल्तानी व्यापार में सबसे अधिक क्रियाशील वर्ग जो समरकन्द में वाणिज्यिक गतिविधियाँ चलाते थे। 1326 के आसपास, भारतीय इस क्षेत्र में दौरा करने वाले अहम मेहमान थे, ऐसा उल्लेख किया गया हैं। 15वीं शताब्दी में, इस क्षेत्र में खरीद–फरोख्त के दस्तावेजों में भारतीयों का नाम मिलता है।

[4] उनके अग्रगामी हिन्दू मुलतानी थे। 19वीं सदी के अंत के लगभग महाद्वीप के सभी क्षेत्रों के व्यवसायी इस व्यापार में हिस्सा लेने लगे थे। इनमें दक्खनी व्यवसायी भी थे काबुल और पेशावर में। बहुत से ईरानी व्यापारी भी दक्खनी के दरबारों में दिखाई दे जाते थे।

के समुद्री मार्गों पर बढ़ते नियंत्रण के चलते, स्थलीय मार्गों पर कारवाँ व्यवसाय में विविधता आयी और फैलाव बढ़ता गया। बोझा ढोने वाले जानवर सामान लाने ले जाने के मुख्य साधन हो गये। उनको रोज आराम करने के लिये लदे सामान को उतारा जाता। अंतरस्थलीय मार्गों से व्यापार को इतनी महता प्राप्त हो गई कि इस दौरान 1688 में आरमेनियन लोगों और अंग्रेजों के बीच एक समझौता हुआ, जिसमें आरमेनियन लोगों से कहा गया कि वे भारतीय सामानों को स्थलीय व्यापार मार्ग से लाने की प्रक्रिया को छोड़ने का प्रण करें और उनको स्थल के बजाय कम्पनी के जहाजों से भेजें।

व्यवसायी गण सुरक्षा की दृष्टि से और बचाव के लिये स्थल मार्ग से कारवाँ में यात्रा करना पसन्द करते थे, क्योंकि कारवाँ का नेता चुंगी और कर के बारे में, व्यापारियों का ध्यान रखता था, अन्य बातों के अलावा कर्मचारियों के साथ होने वाले मसलों में और छुटपुट व्यवधानों को निपटाता था। कारवाँ के प्रमुख या कारवाँ के नेता के अलावा, एक और महत्वपूर्ण व्यापारी होता था, कारवाँ–बाची जो व्यवसाइयों के बीच यात्रा के दौरान हो जाने वाले किसी भी झगड़े को निपटाने का काम करता था। कारवाँ–बाची पूरे कारवाँ के लिये महत्वपूर्ण निर्णय लेता था जैसे कि रात में ठहरने के लिये जगह का चुनाव करना, और अन्य कई छोटी–छोटी जिम्मेदारियों को निभाना। आरमेनियन और बनिये जैसे सौदागर स्वभाव से ही मितव्ययी होते थे, और सामान्यतया अपनी सभी व्यवस्थायें करके चलते थे।

कारवां सराय देश भर में प्रतिष्ठित लोग द्वारा बनाई गई थीं। ऐसी बहुत ही कम जगहें थीं जहाँ सराय न बनाई गई हो। इन सरायों के आकार शहर के महत्व के आधार पर भिन्न–भिन्न होते थे, इसमें ठहरने वाले कारवाँ की संख्या और कितना इनका उपयोग होता होगा, इस पर भी निर्भर करता था। इस्फाहान की कारवाँ सराय के लिये, ट्रेवरनियर ने व्यापारियों को सलाह दी कि ऊपर की मंजिलों में कमरे लें क्योंकि उनका किराया भूतल से तीन गुना सस्ता होता था। कभी–कभी तो घोड़ों के लिये अलग से घुड़साल बनाई जाती ताकि उनको ठीक से छत और स्थान सुलभ हो सके। न केवल सामरिक रूप से महत्वपूर्ण शहर अपनी सरहदों में आने से कारवाँ से आय प्राप्त करते थे, बल्कि इस दौरान उनकी ठहरने की अवधि में उनके द्वारा उपयोग की गई वस्तुओं से भी उनको आय प्राप्त होती थी।

कुछ भारतीय व्यवसायी अपने साथ अपने देश से सिद्धहस्त बुनकर लाये और उनको पड़ौसी क्षेत्रों में जैसे समरकंद में बस जाने के लिये प्रोत्साहित भी किया। बनियों के अतिरिक्त, आरमेनिया और फारस के व्यापारी भी इस व्यापार में शामिल थे जो परशिया से भारत तक होता था। अन्य जो इसमें शामिल हुए वे अफगान, बारकीज, हजारा, इमाकिस, खुरासानी, मुल्तानी, ताजिक और उजबेक थे। इन व्यवसायिक समूहों के अतिरिक्त, ग्रामीण घुमन्तू (जिनको पोविन्दा भी कहा जाता था) लोगों ने भी इस क्षेत्र में व्यापार को फैलाया।

आरमेनिया के व्यापारी अपनी किफायत और व्यापार कुशलता के लिये पूरे विश्व में जाने जाते थे, उनका व्यापार नेटवर्क बहुत संघटित था। अंतर्देशीय व्यापार मार्गों पर सभी पारगमन बिन्दुओं पर उनके बसासट के निशान मिलते हैं। उन्होंने यात्रा के समय समूह में रह कर खर्च में बचत की जिससे यात्रा में होने वाले अतिरिक्त व्यय में कमी की जा सके। जॉन फ्राइर ने उनकी इस क्षमता का जिक्र किया है:

... जहाँ भी वो गये अपनी मोल–तोल की क्षमता में माहिर, उन्होंने दलाली से अपना बचाव किया, और मितव्यपिता के सभी तरीकों का अध्ययन कर यात्रा में जहाँ 50 थोमंड से काम चलता वहां वह केवल 50 शिलिंग ही व्यय करते।

सभी व्यापारिक समूहों (समाजों) के लिये अपना स्थान बनाये रखना और अधिकारियों और जनता का विश्वास भी बनाये रखना मुश्किल होता था, ताकि उनका व्यापार तरक्की कर सकें। उनको न केवल शासन करने वाले लोगों का सद्भाव जीतना होता था, बल्कि उनको अपने लिये दूर दराज क्षेत्रों में स्वशासी संगठन बनाने का प्रयास भी करना होता था। परिणामस्वरूप वे अपने लिये अलग रहने की व्यवस्था करते और अपनी वाणिज्यिक समस्याओं और उत्तराधिकार के मसले भी अपनी प्रथाओं और सामाजिक नियमों के अनुसार ही निपटा लेते।

व्यापार से संबंधित वस्तुएं और बाजार

जैसा कि ऊपर बताया गया है, मुगल अर्थव्यवस्था अधिकाशंतः कृषि आधारित व्यवस्था थी। इसलिये, मुगल व्यापार में अनाज ही महत्वपूर्ण था। उसके बाद आने वाली वस्तु सूती कपड़ा था। बेहतरीन किस्म में सूत का कपड़ा, ढाका की उत्कृष्ट मलमल, गुजरात में निर्मित उल्लेखनीय स्वर्ण कशीदाकारी, सामान्य किस्म का सूती कपड़ा, देश के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में विभिन्न दरों पर व्यापार के लिये रखे जाते थे।

उपभोग की तैयार वस्तुओं के अतिरिक्त, दरमियानी वस्तुओं और कच्चे माल का भी व्यापार किया जाता था। जो क्षेत्र किन्हीं खनिजों एवं धातुओं में भरपूर होते थे, वे दूसरे क्षेत्र की, जहाँ विशेष निर्माण इकाइयां लगी हुई थीं, मांग पूरा करते थे। इस प्रक्रिया ने एक पूरा जाल ही तैयार कर दिया था। जहाँ अलग–अलग क्षेत्र उत्पादन और आपूर्ति की वजह से एक दूसरे पर निर्भर हो गये थे। एक दूजे पर आश्रित होने का एक उदाहरण बंगाल और गुजरात का दिया जा सकता है। कच्चा रेशम का धागा बंगाल से गुजरात को ले जाया जाता, जो स्थलीय और जलमार्ग से जाता, वहाँ की फलती–फूलती रेशम उद्योग की आवश्यकता की पूर्ति के लिये। बदले में, गुजरात बंगाल की फलती–फूलती सूती कपड़ा उद्योग की आवश्यकता हेतु कपास की आपूर्ति करता था।

क्षेत्रीय स्तर पर एक–दूसरे पर निर्भरता बहुत गहन थी, यह देखते हुए कि माल ढुलाई की लागत की अधिकता, और लागू करों का बोझ भी था। एशिया के व्यापार की प्रकृति को जेकब वान लेडर ने अपनी पुस्तक में छुट पुट बिक्री का नाम दिया है और यह एशिया के व्यापक और विविधतापूर्ण व्यापार को विवेचित नहीं कर सकता है (1955: 63–69)।

अहमदाबाद और आगरा में उत्पादित किया जाने वाला नील एक अन्य उत्पाद था, जो मुगल भारत में दूर–दूर तक भेजा जाता था। इसका उपयोग कपड़ा निर्मित करने में किया जाता था।

मुख्यतः निर्यात की जाने वाली जिंस (उत्पाद) जो भारत से मध्य एशिया तक भेजी जाती थी, वह विभिन्न किस्मों के कपड़े थे। अन्य वस्तुओं को, जिनका व्यापार किया जाता था, उनमें मसाले, चीनी, बहुमूल्य रत्न और साथ ही घोड़े थे। मध्य एशिया से आयात की जाने वाली वस्तुएं मुख्यतः घोड़े, सूखे मेवे, ताजे फल, ऊन, मूंगा, बाज और कस्तूरी थी। मुगल बादशाह जहांगीर (1605–1626) समरकन्द से अंगूर और सेब प्राप्त करते थे। सत्रहवीं शताब्दी के दूसरे भाग में, बरनीयर बताते हैं कि मध्य एशिया के फलों का व्यापार दक्खन तक होता था। भारत के लिये घोड़ा का आयात आरम्भिक मध्य युग से ही होने लगा था। घोड़ों का व्यापार मध्यकाल में बराबर फायदे का सौदा बना रहा। बाबर के अनुसार, 16वीं शताब्दी में सात से

दस हजार घोड़ों का प्रति वर्ष आयात काबुल में होता था। इस व्यापार में गिरावट उन्नीसवीं सदी में आई।

भारतीय इतिहास के इस काल के दौरान पड़ोसी देशों के साथ होने वाले व्यापार में जिंस की एक लम्बी फेहरिस्त उपलब्ध है। दिल्ली की कशीदाकारी, मिर्च–मसाले, मसूलीपटनम, बंगाल का सूती कपड़ा और सयाना की शक्कर, लाहौरी नील, लोकप्रिय वस्तुएं थी, जो आगरा लाहौर मार्ग से यूरोप जाया करती थीं, लाहौरी व्यवसायी लोग भी सामान लेकर काश्मीर से लाहौर पहुंचने लगे, विशेष कर शाल के साथ।

पुर्तगाल द्वारा लोहे, ताँबे और स्टील के परिवहन पर समुद्री रास्ते से व्यापार पर प्रतिबंध लगाये जाने के बाद, इन जिंसों की ढुलाई परशिया तक स्थलीय रास्ते से होने लगी। तम्बाकू एक और जिंस थी जिसका व्यापार बहुत बड़ी मात्रा में होता था। कहा जाता है कि व्यापार का संतुलन भारत के हित में होता था। परिस्थिति यह थी कि परशिया से बहुत अधिक निर्यात भारत को नहीं हो पाता था। केवल विलासिता की वस्तुएँ, रत्नों आदि का आयात ही भारत में होता था (ट्रेवरनियरः 218)। ब्राडक्लाथ– एक प्रकार के कपड़ा का आयात बड़ी मात्रा में आगरा, दिल्ली और लाहौर की बाजारों के लिये हुआ करता था।

आयात की जाने वाली जिन्सों में घोड़े, कॉफी, गुलाबजल और हाथी के दांत होते थे। बहुमूल्य धातुओं का आयात महत्वपूर्ण वस्तु के रूप में होता था, चांदी, रियाल और डुकट रूपये। इनमें से अधिकांश सिक्के यूरोप से आते थे, जो लाल सागर और पारस की खाड़ी से आते थे। यूरोप को चांदी की आपूर्ति नई दुनिया से होती थी। चाँदी का घरेलू उत्पादन नहीं के बराबर था, इस चाँदी के सिक्कों ने मुगल भारत की अर्थव्यवस्था को चलाये रखा।

7.3.4 व्यापार, वाणिज्य और राज्य

व्यापार राज्य की राजस्व की प्राप्ति का प्रमुख एवं महत्वपूर्ण स्रोत था। राज्य का आवश्यक उत्तरदायित्व व्यवसाय की सुरक्षा करना भी था। विभिन्न दरबारों के राजे–महाराजे और देश इस बात को आवश्यक समझते थे कि आपस में मनमुटाव होने के बाद भी व्यापारिक स्थलीय मार्गों में सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिये। राजनीति और व्यापार के मध्य आपस में नजदीकी संबंध हुआ करते थे। मुगल शंहशाहों और परशिया और उजबेक शासकों के बीच व्यापारियों के माध्यम से पत्रों का आदान–प्रदान होता था।

राज्य सरकारों/अधिकारियों ने बढ़ते हुए व्यापार को देखते हुए सुविधायें प्रदान करने के प्रयास करने शुरू किये। शेरशाह सूरी द्वारा सड़क निर्माण का वृहत कार्य किया जाना इसका एक उदाहरण है। उसने आगरा और बुरहानपुर के बीच सड़क बनवाई, दूसरी सड़क आगरा से जोधपुर और चितौड़ तक बनवाई। लाहौर से मुलतान तक सड़क पर उसने बहुत से आरामगाह बनवाये। काबुल को जाने वाली सड़क पर दोनों ओर कई शहर पनपे। व्यापारिक मार्गों पर बढ़ती गतिविधियों ने शहर की आन्तरिक आर्थिक प्रगति को भी सहयोग दिया।

व्यापारियों का भविष्य, उनका लाभ, इन शहरों और इनकी शासन व्यवस्था पर बहुत गहराई से निर्भर था। हमें यह ध्यान में रखना चाहिये कि न केवल शासक वर्ग व्यापार को सुरक्षा प्रदान करते थे, बल्कि विलासिता से जुड़ी वस्तुओं की माँग भी बहुतायत से इसी वर्ग से आती थी। यह मांग बाजार में उपलब्ध कृषि आमदनी से अधिशेष की उगाही से ही संभव था। दूसरी ओर, शासक वर्ग के अभिजात्य लोग भी व्यापार में संलग्न रहते थे। यह दो तरफा संबंध था

औरंगजेब, जब युवराज था, उसने सिंध क्षेत्र में अपना एक बन्दरगाह बनाने का प्रयास किया था। इसी प्रकार, मुगल शासन के बहुत से सम्मानित दरबारियों का नाम व्यापारियों के रूप में दर्ज था, जो स्वयं इस वर्ग में शामिल थे, या जो व्यवसायिक परिवारों से आते थे।

कराधान / करारोपण

कुछ जिन्सों का महत्व साम्राज्य के लिये इस कारण बढ़ गया कि उन पर कर लगा दिया गया। जिन्सों पर लगाये गये विभिन्न प्रकार की सीमा शुल्क की दरें, जिन्स के महत्वूपर्ण होने की स्थिति स्पष्ट करती थीं। उदहारण के तौर पर, मुगल काल में सिक्कों के चलन के लिये बहुमूल्य धातुओं पर जिनका नियमित आयात विशेष रूप से महत्वपूर्ण था। जबकि दूसरी ओर, साधारण व्यापार की वस्तुएँ जिनको 3.5 प्रतिशत तक सीमा शुल्क अदा करना होता था, वहीं बहुमूल्य धातुओं पर यह शुल्क केवल 2 प्रतिशत था (प्रकाश, 1981: 177)।

मुगल शासन के अंतर्गत नियमित रूप से कराधान की नीति बदलती रहती थी। बादशाह जहांगीर ने काबुल और कंधार से किये जाने वाले व्यापार पर सीमा शुल्क समाप्त कर दिया था, या माफ कर दिया गया था। शासक के आदेशों के अनुसार व्यापारियों पर लागू करारोपण की नीति बहुत आसान दिखाई देती थी। जबकि, वास्तव में उपलब्ध दस्तावेजों से पता चलता है कि व्यापारियों द्वारा स्थानीय कर्मचारियों के उत्पीड़क स्वभाव का सामना करना पड़ता था। हमें ऐसी बहुत सी याचिकायें और शिकायतें मिली हैं जो व्यक्तिगत रूप से व्यापारियों ने, व्यापारिक समाजों ने, और विदेश व्यापार कंपनी ने की हैं, जिनमें कर्मचारियों की ज्यादती और मनमानी की शिकायतें हैं।

इन सब कठिनाइयों के बावजूद, व्यापार में वृद्धि होती गई और इस उपमहाद्वीप ने अनेकों देशों के व्यापारियों को आकर्षित किया।

प्रशासनिक पद

अन्य जिम्मेदारियों के अलावा, शासक व्यापार मार्गों को सुरक्षित रखने के लिये भी उत्तरदायी होते थे। लूट या डकैती पड़ने की स्थितियों में प्रान्त के सूबेदार इसके लिये उत्तरदायी ठहटाये जाते थे। शासक को सूचना मिलनी चाहिये थी कि प्रान्त में व्यापारियों के कारवाँ आ गये हैं। व्यापार–मार्गों को सुरक्षित बनाये रखने के लिये विशेष नियुक्तियाँ की जाती थीं। ये नियुक्तियाँ स्थलीय मार्गों और अंतर्देशीय मार्गों पर होनी थीं। उदाहरण के लिये, मुगल शासकों को लाहौर और मुलतान के बीच पठानों के आक्रमणों से बचाव के लिये कारवाँ की सुरक्षा हेतु 23 सभ्रांतों को नियुक्त करना पड़ा।

व्यापारी वर्ग शासकों को सहयोगी की तरह मानते थे। उदाहरण के लिये, खत्री व्यापारियों का मुगल प्रशासन के साथ बहुत लम्बा सहयोग रहा। उन्होंने मुगल राज में बहुत से पदों पर काम किया, अमीर के पद से लेकर जो सूबे में उच्च पद से लेकर स्थानीय कर्मचारियों तक होते थे, निम्नतम कर्मचारियों (मुसतद्दी) तक जो राजस्व विभाग में हुआ करते थे।

7.4 अवध का केस–अध्ययन

16वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में वाणिज्य और व्यापार में विस्तार आने के कारण, यात्रायें अधिक संख्या में और गति से होने लगी। इस कारण सुविधाओं की माँग बढ़ने लगी जैसे कि सराय

आदि। यात्रा वृत्तांतों में लिखित कुछ सराय सुरक्षित रह गयी हैं। मध्यकालीन भारत में जहाँ पर जनसंख्या का घनत्व अधिक था, बड़ी संख्या में सराय स्थापित की गई थीं। ये अधिकतर अलीगढ़, प्रतापगढ़, पटरी, सम्भल, सिकन्दरा और सोराअन में थीं।

ये सराय इन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों जैसे आगरा से बनारस, दिल्ली से फैजाबाद होते हुए अवध, दिल्ली से अलीगढ़ होते हुए आगरा और खीरी से फैजाबाद के मुख्य स्थलों पर थीं। खीरी से फैजाबाद महत्वपूर्ण कपास उत्पादन यहीं से गुजरता था। कपास और सूत का व्यापार खीरी और फैजाबाद को इलाहाबाद से मुख्य सड़क से जोड़ता था। सरायों की संख्या में जो कमी या अधिकता वैकल्पिक मार्गों पर दिखती थी, यह स्पष्ट करती थी कि सत्रहवीं सदी के दूसरे भाग में व्यापारिक मार्गों में बदलती प्राथमिकतायें क्या थीं?

कुछ स्थानों पर सरायों की स्थापना उस क्षेत्र में राजनैतिक विकास को परिलक्षित करती थी। उदाहरण के लिये, सादाबाद में तीन सरायों की स्थापना, उनका निर्माण तब हुआ जब शाहजहाँ के वजीर, सदुल्ला खाँ ने वह शहर बसाया। वहीं दूसरी ओर, जहाँ पर दो या तीन सराय थोड़ी–थोड़ी दूरी पर दिख जाती थीं, वो इस बात को इंगित करती थीं कि व्यापारियों को ऐसी सुविधायें मुख्य मार्ग से जोड़ने वाली फीडर सड़कों पर भी दी गई थीं। इस प्रकार की सुविधायें, अलग–अलग सरायें, बाजार और उत्पादन केन्द्रों के रूप में उस क्षेत्र के लोगों की जरूरतें पूरी करने के काम आती थीं।

मुगल शक्ति के शाही केन्द्रों के पतन के साथ, सदी के अन्त तक, नये शहर बस गये। उनमें से कुछ थे, अवध में फैजाबाद, (सआदत खान द्वारा बसाया गया), लखनऊ (नवाब आसुफुद्दौला ने अपनी राजधानी बनाई), फरूर्खाबाद (मोहम्मद खान ने बसाया) और नजीबाबाद (नजीबुद दौला ने बसाया)। शहरों को पुनर्निर्माण कर बसाना या नये शहरों का बसाना इस बात को इंगित करता था कि व्यापार की रफ्तार में परिवर्तन आता रहा था। शाही शहरों के पतन और सेना की चढ़ाइयों में कमी आ जाने के बाद भी, मध्यकालीन भारत में शहरीकरण में वृद्धि के कारक कार्य करते रहे, और इन्हीं कारकों के कारण इस काल में भी शहर फलते–फूलते रहे।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखियेः

क) कारवाँ सराय : .....

.....

.....

ख) खत्री लोग : .....

.....

.....

ग) अंतर्देशीय वाणिज्य के अध्ययन के स्रोत : .....

.....

.....

द) मुगलों के अंर्तगत प्रमुख आंतरिक व्यापार मार्ग : .....

.....

.....

2) मुगल साम्राज्य में बड़े अंतरस्थलीय व्यापार मार्गों की सूची बनाइए। इस काल में भारत और मध्य एशिया के बीच व्यापार के प्रमुख जिन्सों के बारे में बताइए।

.....

.....

.....

.....

3) मुगल साम्राज्य में व्यापार को विस्तार देने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए?

.....

.....

.....

.....

4) मुगलों के आधीन व्यापार और राज्य प्रशासन के मध्य संबंधों की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

7.5 सारांश

सत्रहवीं शताब्दी से पूर्व, उपमहाद्वीप में बहुत से राज्य मौजूद थे; मुगल साम्राज्य से लेकर, मराठा राज्य, जो मध्य और उत्तर भारत में थे, बीजापुर, गोलकुण्डा और विजयनगर दक्षिण भारत में थे। इस काल के पूर्व की अर्थव्यवस्था का इतिहास अपूर्ण रह जायेगा, यदि किसी एक क्षेत्र की चर्चा तक ही सीमित रहा जाये। सत्रहवीं शताब्दी के समाप्त होते–होते, लगभग सारा उपमहाद्वीप मुगल शासन के अंर्तगत आ गया था। भारत की आर्थिक उन्नति हमारे इस अध्ययन के दौरान इस प्रकार, अधिकाशंतः मुगल साम्राज्य के संदर्भ में ही रही। इस शताब्दी के दौरान, यूरोपीय व्यापार भी शुरू हो गया था। अठारहवीं शताब्दी के मध्य के दौरान, यह व्यापार अपने विस्तार के दौर में चला गया, जो समुद्री व्यापारिक मार्गों और स्थलीय व्यापार मार्गों के साथ वाणिज्यिक व्यवस्था और गहन व्यवसायिक ताने–बाने से बढ़ता रहा।

व्यापार में विस्तार और वित्तीय व्यवस्था में प्रगति के साथ साहूकारों का संबंध जो राजस्व को केन्द्र तक भेजने का कार्य करते थे, आदि कुछ मुख्य विशेषतायें सत्रहवीं शताब्दी में मुगल अर्थनीति में दिखाई थीं। इन विशेषताओं ने अर्थव्यवस्था और व्यापार से संबंधित अर्थसंबंधी पहलुओं को आपस में सम्मिलित कर दिया। व्यापार में सम्भ्रांतों और शासकों की सम्बद्धता उल्लेखनीय रहती थी। जबकि शाही प्रतिनिधि नकदी के हस्तांतरण में लगे रहते थे, वित्तीय लेन–देन अधिकारिक बैंकर्स (साहूकारों) और हुण्डी (बिल्टी) के माध्यम से ही होता रहा।

सोलहवीं से अठारहवीं शताब्दी के काल में, श्रम के सामाजिक विभाजन और कौशल के विकास के साथ व्यापार की प्रगति जो देश में स्थापित हो सकी, वह दशकों तक अपना प्रभाव डालती रही। मुगल साम्राज्य में व्यापार की प्रकृति और अर्थव्यवस्था शताब्दी के अंत तक विघटित हो गई। राज्य का राजस्व तेजी से घटता गया। सिख विद्रोह के अतिरिक्त ग्रामीण और शहरी व्यवधान भी थे। कुछ व्यापारिक समूह पूर्व की ओर प्रवास कर गये, अन्य मुलतान के दक्षिण की ओर चले गये, जबकि कुछ अन्य, अपने व्यापार को संभाले रहे और नये साझेदारों के साथ धीरे–धीरे अपनी पहली स्थिति पर आ गये। इसलिये, सामान्य संकट के बदले, सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में गतिशील अर्थव्यवस्था के प्रमाण उभरने लगे। इस प्रमाण ने मुगल साम्राज्य के पतन के संबंध में चल रही अवधारणाओं का पुनर्मूल्याकन आवश्यक कर दिया।

अठारहवीं शताब्दी के दूसरे भाग तक, उपमहाद्वीप में औपनिवेशिक शासन और उनके आर्थिक क्रियाओं में बाधा डालने का एहसास होने लगा था। यह भारत की अर्थव्यवस्था के लिये एक ऐतिहासिक परिवर्तनकारी बिन्दु साबित हुआ। इसका अनेकों वाणिज्यिक और उत्पादक प्रक्रियाओं पर असर पड़ा।

7.6 शब्दावली

अमल : प्रशासन/कार्य में लागू करना

बग्गल : यह शब्द भारत में मुस्लिम लेखकों ने बनिया समाज के लोगों की पहचान के लिये प्रयोग किया।

बोहरा : गुजरात की व्यापारिक समाज के प्रतिनिधि।

भाईबन्द : भाई।

हुण्डी : बिल्टी। दो प्रकार के पत्र दर्शनी और मुद्दती, उनको जारी करने की प्रकृति उनके नाम से स्वतः ही स्पष्ट होती है।

कारवाँनी : अनाज के व्यापारी जो दो भागों में पुनः बाँटे जाते हैः 'सौदागरन इकारवानी' – ढुलाई वाले व्यापारी और 'सौदागरन–इबाजारी', बजार के व्यापारी।

व्योपारी : व्यापारी।

जकात : सीमा–शुल्क।

7.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) अ) उपभाग 7.2.3 देखें।

ब) उपभाग 7.2.3 देखें।

स) उपभाग 7.2 देखें। और

द) उपभाग 7.2.1 देखें।

2) उपभाग 7.2.2 देखें।

3) उपभाग 7.1 और 7.3 देखें।

4) उपभाग 7.2.4 देखें।

5) उपभाग 7.3 देखें।

7.7 अध्ययन हेतु सुझाव

Alam, Muzaffar. 1994, 'Trade, State Policy and Regional Change: Aspects of Mughal-Uzbek Commercial Relations, *c.* 1550-1750', in *Journal of the Economic and Social History of the Orient,* Vol. 37, No. 3, pp.202-227.

Chandra, Satish. 1959, 'Commercial Activities of the Mughal Emperors during the Seventeenth Century', in *Proceedings of the Indian History Congress*, Vol. 22, pp.264-269.

Chaudhuri, K. N. 1990. *Asia before Europe: Economy and Civilization of the Indian Ocean from the Rise of Islam to 1750.* Cambridge: Cambridge University Press.

Chaudhuri, K. N. 1978. 'Some Reflections on the Town and Country in Mughal India', in *Modern Asian Studies*, Vol. 12, No. I, pp. 77-96.

Chicherov, A.I. 1971, *India: Economic Development in the 16th-18th Centuries: Outline History of Crafts and Trade.* Moscow: Central Department of Oriental Literature.

Moosvi, Shireen. 2008. *People, Taxation and Trade in Mughal India.* Oxford: Oxford University Press.

Prakash, Om. 1981. 'Presidential Address: Some Aspects of Trade in Mughal India', in *Proceedings of the Indian History Congress,* Vol. 42, pp.173-187.

Qaisar, A.J. 1974. 'The Role of Brokers in Medieval India', in *The Indian Historical Review*, Vol. I, No. 2, pp.220-222.

Raychaudhuri, Tapan& Habib, Irfan. ed. 1982. *The Cambridge Economic History of India, Vol. I: c. 1200-1750*, London: Cambridge University Press.

Sources for the Study of Economic History of Medieval Period | Vidya-mitra

https://www.youtube.com/watch?v=88XQIi_wKxE&list=PL_a1TI5CC9RHAweDRQ4pPwiQq4SWXZB1-&index=3

Mughal Empire: Trade and Monetary System | e-Pathshala | MHRD

https://www.youtube.com/watch?v=AIL-adfuybI

Markets and Internal Trade in Mughal India (History of India c.AD 1550-1750) | Vidya-mitra

https://www.youtube.com/watch?v=FWuMZLzhFrM

Early European Trade and Commerce | Vidya-mitra

https://www.youtube.com/watch?v=m8yiyY0g0J4

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY